युक्रांद

जन्म-दिवस विशेषांक

११ दिसम्बर, १९७४

मूल्य : १ रु. २५ पैसे

WITH PRAYER IN BHAGWAN'S LOVE

Grams : HIRACOAL

AGARWAL COAL CORPORATION

Coal & Coke Dealers, Suppliers & Brokers

&

TRANSPORT CONTRACTORS

H. O. 27-A, Premnagar, Manak Baug Road, INDORE M. I
Branch : 10 Nasia Road, INDORE City Phone : Offi 3727
Resi 3375

Registration No.
MPST No. IND-I/XVII/82
C. S. T. No. IND-I/2821
ASSOCIATE CONCERNS :

1. **Agarwal Transport Corporation**
   Indore, Prasia, Ahmedabad
2. **Agarwal Finance Corporation**
   Indore
3. **Associated Carriers**
   Indore, Jharia,

PURCHASE OFFICES :

(a) **Parasia**
(Dist. : Chhindwara) M. P.
Phone : 119 P. P.

(b) **Jharia**
(Katrasmode) Bihar
Phone : 60651

SALES OFFICE :
Vasudevnagar Society,
Opp. Manjushree Textile Mills,
Girdharnagar Shahi Baug,
AHMEDABAD-380004
Phone : Offi. 66671

११ दिसम्बर, १९७८

भगवान रजनीश का ४८ वां जन्म-दिवस

सत्य ज्योति के
अविचलित महानायक,
अनंतता के
परिचायक,
अनवरत श्रम के
महाऋषि,
भगवान श्री रजनीश के
४८ वें जन्मदिन
११ दिसम्बर, ७८ पर

प्रभु हमें उस ओर
ले चलो
जहां तुम्हारा
अमृत रस बरसता हो।
हमारी नैया के
खेवनहार बनो प्रभु
रजनीश
चरणों में
शत् शत् वंदन

★ मा योग मीरा, जूनागढ़ और तुम्हारे सभी प्रेमी जन ★

भगवान श्री के संदेश को

दूर-दिगंत तक पहुंचाने में संलग्न

स्वामी वैराग्य अमृत कीर्तन मंडली

भगवान श्री रजनीश जन्म दिवस पर सबसे आनंद की घटना है कि स्वामी वैराग्य अमृत जी के सन्निध्य और मार्ग-दर्शन में विगत दो वर्षों से सारे देश में एक 'नव-संन्यास अंतर्राष्ट्रीय' संकीर्तन मंडली का भ्रमण हो रहा है। इस मंडली ने सारा कुछ अर्पित कर भगवत् वाणी को दूर दिगंत तक पहुंचाया है। अभी यह मंडली राजस्थान के दौरे पर है। इस मंडली में स्वामी वैराग्य अमृत (म. प्र.), स्वामी योग प्रताप भारती (उ. प्र.), स्वामी निर्मल भारती (महा.), स्वामी कृष्ण सिद्धार्थ (म. प्र.), स्वामी कृष्ण पीताम्बर (इंग्लैंड), स्वामी विष्णु चैतन्य (पंजाब), स्वामी आनन्द अरूप (यू. एस. ए.) हैं।

मंडली का नियोजित कार्यक्रम इस प्रकार है :

● चुरू	८, ९ एवं १० दिसम्बर	संयोजक :
● रतनगढ़	१२ व १३ दिसम्बर	,,
● सरदार शहर	१५, १६ दिसम्बर	,,
● अलसेसर	१८, १९ दिसम्बर	,,
● झुंझनूं	२१, २२, २३ दिसम्बर	,,
● नवलगढ़	२५, २६ दिसम्बर	,,
● सीकर	२८, २९, ३० दिसम्बर	साधु कृष्णदास, (हनुमानसिंह) शेखीसर हाउस, स्टेशन रोड, सीकर (राज.)
● रिंगस	१, २, ३ जनवरी ७५	
● अलवर	५, ६, ७ जनवरी ७५	साधु अमृत तीर्थ, (महेंद्र शास्त्री) ४०, मोती डोंगी, अलवर (राज.)

नोट—'युक्रांद' के प्रेमी मित्रों से निवेदन है कि मंडली के कार्यक्रम में अधिक से अधिक सहयोग दें।

भगवान श्री रजनीश के

४४ वें जन्मोत्सव पर भाव-अंजलि

□ *स्वामी योग चिन्मय, पूना*

हमारे परमपूज्य सद्गुरु भगवान श्री रजनीश का ४४ वां जन्म दिवस है—११ दिसम्बर, १९७४. इस पुनीत अवसर पर, समस्त विश्व के हम जो उनके शिष्य, भक्त और प्रेमिजन हैं, उनके प्रति—उनके दिव्य चरणों में—अपनी श्रद्धांजलि, प्रेम और प्रणाम अर्पित करते हैं।

वे अनन्त आशीषों की वर्षा हम पर कर रहे हैं, हमारे आध्यात्मिक जागरण और उत्थान के लिए सतत अपूर्व उपदेश दे रहे हैं और अपनी दिव्य उपस्थिति से हमारे पथों को आलोकित कर रहे हैं। उनकी इन

महा-करुणा से उद्भूत कृपा के प्रति हम अपनी अन्तरस्थ भक्ति और कृतज्ञता निवेदित करते हैं।

और हम उनके दीर्घ जीवन के लिए प्रार्थनारत् हैं—ताकि भक्तों, साधकों एवं मुमुक्षुओं को आध्यात्मिक जागरण और ज्ञानोपलब्धि की ओर अग्रसर करने का उनका अभियान, उनकी—प्रभु की—करुणा और प्रसाद से फलीभूत हो जाए।

भगवान श्री का जन्मोत्सव कार्यक्रम

भगवान् श्री रजनीश का जन्मोत्सव बुधवार, दिनाँक ११ दिसम्बर, १९७४ को रात्रि ८-०० से ९-३० बजे तक 'श्री रजनीश आश्रम', १७, कोरेगांव पार्क, पूना-१ में उनकी उपास्थिति में मनाया जाएगा।

दर्शन, आशीष एवं सत्संग के लिए सभी प्रेमपूर्वक आमंत्रित हैं।

भगवान श्री रजनीश : एक शिष्य की दृष्टि में

भगवान् श्री रजनीश एक परम सिद्ध सद्गुरु हैं।

इक्कीस वर्ष की छोटी उम्र से ही आप भगवत्स्वरूप हो गये हैं। वे मिट ही गये हैं। अब तो भगवत्ता और भागवत् चैतन्य ही उनसे आर-पार होकर अपनी दिव्य लीला करती है। प्रत्येक क्षण वे सहज समाधि में, निर्वाण में, परम शून्यता में—अहंकार-मुक्त, आकाशवत् और दर्पणवत् जीते हैं।

पिछले अनेक जन्मों में अनेक-अनेक आयामों से परम सत्य की खोज करने के कारण, जब वे परम-शून्य और परम चैतन्य हुए, तो अनेक आध्यात्म-पथ उनके भीतर आलोकित व अवतरित हो गये हैं।

बहु-आयामी हैं—उनकी विभूतियां। वे परम योगी हैं और सिद्ध भक्त भी। वे परम तांत्रिक हैं और सिद्ध राजयोगी भी। वे कुण्डलिनी सिद्ध हैं और परम अवधूत ज्ञानी भी। वे परम शून्य निर्वाण भी हैं और परमपूर्ण परब्रह्म भी। वे गुणातीत तुरीयातीत और देहातीत अवस्था में पूर्ण प्रतिष्ठित हैं।

अध्यात्म की वह सब परम गरिमा जो कभी किसी बुद्ध और महावीर में, लाओत्से और मुहम्मद में, कृष्ण और क्राइस्ट में, जरथुस्त्र और जनक में, कबीर और नानक में, रामकृष्ण और रमण में प्रकट हुई थी—वह सब आप में भी प्रकट हुई है।

बहु-आयामी एवं निष्पक्ष व्यक्तित्व होने के कारण आप गीता, उपनिषद्, महावीर-वाणी, बाइबल, कुरान, जपजी आदि पर तथा योग, तंत्र, भक्ति, ईसाई, सूफी, झेन, हिन्दू, तिब्बती आदि साधना पद्धतियों के गुह्य रहस्यों पर पूर्ण अधिकार से प्रकाश डालते हैं।

वे मनुष्य को उसकी मूर्च्छा और गहरी आध्यात्मिक निद्रा से झक-झोरने और जगाने तथा उसे आत्म-साधना एवं आत्म-जागरण की ओर अग्रसर करने के लिए सतत् संलग्न हैं।

वे परम पावन तीर्थस्वरूप हैं। उनकी कृपा और सामीप्य से मुमुक्षुओं और भक्तों को मुक्ति का मार्ग सरलता और सहजता से उपलब्ध हो जाता है।

वे कहते हैं : 'धर्म त्याग नहीं, परम जीवन का महाभोग है। धर्म गम्भीरता नहीं—एक महासंगीत, विराट-नृत्य और महा उत्सव है। प्रेम और प्रार्थना, ध्यान और समाधि, समता और संन्यास उस परम जीवन में प्रवेश करने के द्वार हैं।'

ऐसे परम पुरुष, परम सिद्ध, प्रज्ञापुरुष की उपस्थिति पूरे विश्व के लिए परम सौभाग्य है।

जिनके पास आंख हों, वे देख लें। जिसके पास कान हों—वे सुन लें। और जिनके पास हृदय हो—वे अनुभव कर लें।

●

★

'जीवन का आनन्द उनका है, जो स्वयं में जीते और स्वयं को जानते और स्वयं को उपलब्ध करते हैं।'

★

आनन्द से भर जाओ

अस्तित्व के इतिहास में
इतनी बड़ी हस्ती और हैसियत का
महामानव
आज ही इस पृथ्वी पर उतरा है।
जिसमें : कृष्ण, क्राइस्ट, बुद्ध, लाओत्से, महावीर आदि का
पूर्णतः जोड़ है।
ऐसे सब जोड़ों से बने बेजोड़ श्री रजनीश को—
पाने, पीने और पचाने का मौका चूकना,
जीवन की दुर्भाग्यता ही होगी।
मित्रो, होश में आओ।
और,
'भगवान' को समर्पित होकर
आनन्द से भर जाओ।

□ श्री चन्द्रकांत भारती
'आसोपालव', बड़ौदा

करुणावान : रजनीश

□ स्वामी नरेन्द्र बोधिसत्व

एक भगवत-चेतना का करुणापूर्ण सहज उपलब्ध सामीप्य बहुतों को यह भ्रम दे देता है कि भगवत-चेतना को जान ही नहीं गये हैं, वरन् भगवत्ता को भी अनुभूत कर लिये हैं।

और यह सतत-भ्रम बाधा बन जाता है भगवत्ता अनुभूति में।

और तब यह करुणावान बहुतेरे इशारे करता है, संकेत देता है, चर्चा-प्रवचनों में बोल भी देता है। लेकिन हम देखते ही नहीं, सुनते ही नहीं—अन्धे और बहरे बने रहते हैं।

और हजार बार वह कहता है कि कुछ नहीं कर पाते, कुछ भी कर सकने की क्षमता नहीं है, तो कम से कम ध्यान करने का संकल्प ही जुटा लो, ध्यान में ही कम से कम नियमित हो जाओ, तो थोड़ी जागरूकता, थोड़ी संवेदना, थोड़ी गति आ जाये।

पर हम तो हैं उल्टे चिकने घड़े जन्मों-जन्मों के—सब पानी की भांति बह जाता है। हजार बहाने खोज लेते हैं. आत्म-प्रवचंना कर स्वयं को समझा लेते हैं।

ऋषि कहते हैं कि यह भगवत-चेतना का सहज सामीप्य जन्मों-जन्मों की साधना के बाद मुश्किल से करोड़ों में से कुछ थोड़ों को ही मिलता है—इसलिए इस जीवंत जीवन-अवसर को चूक न जाना।

ऋषि कहते हैं, वह करुणापूर्ण भगवत-चेतना रजनीश हैं। ●

प्रभू की हवाएं

ये प्रभू की हवाएं, जहां भी बहाये
खुशी से बहूंगा, बिहंसता रहूंगा

★

ये सांझ-ओ-सकारे, ये प्रभू के नजारे
ये काले अंधेरे, ये गोरे उजारे
बहुत प्यारे - प्यारे ये प्रभू के इशारे
मैं उसके ही रंगों में खिलता रहूंगा

★★

ये रसीली बहारें, ये नशीली फुहारें
ये प्रभू का है आलम, ये प्रभू की पुकारें
मुझे हैं बुलाती, मुझे हैं झुलाती
मैं उसकी ही धुन पे मचलता रहूंगा

★★★

मैं जिस ओर जाऊं, उसी उसको पाऊं
किसे याद रक्खूं, मैं किसको भुलाऊं
मैं उसकी लगन में, हां, उसमें मगन मैं
मैं उसकी अगन में झुलसता रहूंगा

★★★★

मुझे तो हैं गाने उसी के तराने
उसी को मनाने, उसी को रिझाने
सभी नाज उसके, सभी साज उसके
वो जिस पे नचाये, थिरकता रहूंगा

□ *स्वामी योग प्रीतम*
भीलवाड़ा (राज०)

(*नहीं राम बिन ठांव*—से संकलित)

बोध-प्रसंग

□ संकलन : *मा दिव्यगंधा*

साधना-सूत्र

(प्र० ६ : २.६.७४)

बस, इतना ही साधना का सूत्र है कि कर्त्ता जब निर्मित होता हो, तब तुम होश से भर जाओ और कर्त्ता को निर्मित मत होने दो। सब कर्म शरीर पर छोड़ दो। सब वासनाएं, सब क्षुधाएं, सब आकांक्षाएं शरीर पर छोड़ दो, अपने पास तुम सिर्फ जानने की क्षमता बचाओ, सिर्फ होश, सिर्फ देखने की कला बचाओ।

●

चलते रहो

(प्र० ११ : ४.६.७४)

किसी ने होतैइ से एक बार पूछा कि ध्यान का सार-सूत्र क्या है? तो होतैइ ने कहा, 'वॉक ऑन', 'चलते जाओ'। रुको मत, रुके कि ध्यान गया। जहां हम रुकते हैं, वहीं मन निर्मित होता है। जहां नदी रुकती है, वहीं सरोवर हो जाती है और सड़ने लगती है।

हालैंड कहता है : चलते रहो, रुको मत, कोई मंजिल नहीं, चलना ही मंजिल है; कहीं पहुंचना नहीं, बहना ही पहुंचना है—बहाव।

●

मैं पश्चिम को मंदिर सौंप रहा हूं

(प्र० १६ : ९.६.७४)

पूरब के पास बना हुआ मंदिर है, जिसमें हजारों बुद्धों की मेहनत है। पश्चिम के पास वैसा मंदिर नहीं है, पर पश्चिम को तलाश है। और तुम बेहोश हो, तो यह मंदिर जीवंत पश्चिम को दे दो।

ध्यान रहे मंदिर उसी का है, जो प्रार्थना करने को तैयार है।

अगर भारत न संभाल सकता हो इस मंदिर को तो जीवंत उन्हें दे दें, जो इसकी खोज में हैं।

मुझसे लोग पूछते हैं कि आपके पास बहुत से विदेशी दिखाई पड़ते हैं, उतने देशी नहीं दिखाई पड़ते ?

इसमें मैं क्या करूं ? मैं उनको मंदिर सौंप रहा हूं। मंदिर तुम्हारा है, मगर तुमने पूजा बंद कर दी है। और यह मंदिर कोई दिखाई पड़ने वाला होता, तो अदालत में झंझट खड़ी होती। यह अदृश्य मंदिर है, इसको मैं उन्हें सौंप दूंगा, जो पूजा करना चाहते हैं, वे उसको ले जायेंगे।

भारत ने जो खोजा है, उसे जीवंत पश्चिम पहुंचाना है। और या फिर भारत को सजग करना है, तो उसे पहुंचाने की जरूरत न रह जाये, मगर यह बचना चाहिए। बुद्ध, महावीर, कृष्ण, राम की जो खोज है, वह बचनी चाहिए। उसे खोकर फिर पांच हजार साल मेहनत करनी पड़ेगी। यही मेरी चेष्टा है।

प्रभु श्री अभिनन्दन

★
★★

अभिनन्दन करूं तेरा प्रभु श्री, है नत मस्तक मेरा
अर्पण करूं हैं पुष्प कहां ऐसे, जिनमें हो न तेरा बसेरा
कहां हार चढ़ाऊं, करबद्ध हूं–भगवन् है सर्वत्र तेरा पसारा
गीत निशब्द के गाऊं कैसे ? है शब्दातीत मेरा प्रभु प्यारा

धर्म क्रांति–मिटी भ्रांति, जिये जुग-जुग प्रभु मेरा
कहते—नहीं जाना कहीं, पाना यहीं करो अंतस बसेरा
शून्य पैठो, मौन साधो, करें इंगित जियो बेसहारा
प्रभु ! मेरा प्रेम पुकारे, धन्य-धन्य ११ दिसंबर का सवेरा

नवधर्म का तानवितान किया आलोक भान मानस झकझोरा
थे में तू में भटके, तूने हम ऐसे झटके में तू से हो गया न्यारा
कर निर्विचार दिया अस्तित्व उघाड़ होना यही बताया
है सत्य जहां है अभी वहां, हो जाओ वहीं रजनीशईश उवारा

मरने में जीना जीने में मरना कैसा गणित भगवन तेरा
अच्छा! तेरा इंगित जन्म मरण के पार, माना अन्तस मेरा
पर तूफान अनेकों जीवन सागर में, छाया गहन अंधेरा
तेरा सागर तू मांझी, हम तो नाव में साझी हैं तेरा सहारा

शब्द झूठे बताते हो, तो कहूं कैसे धन्य जन्म दिवस तेरा
चुप रे मन ! एक बार अंतस बोल, प्रभुश्री तो सबका प्यारा
मेरी उम्र लगे तुमको, जुग-जुग आये जन्मदिवस तुम्हारा
हे शून्य सृष्टा, युग दृष्टा स्वीकारो बस प्रेम-प्रणाम मेरा

□ *नीताराम त्यागी*
बुलन्दशहर (उ० प्र०)

जड़ में वासना है

हे महासूर्य,
भयभीत हूं,
तेरी किरणें छू न दें,
भाप न बन जाऊं,
बदल न जाऊं,
अपनी पीड़ा से पीड़ित हूं,
जड़ में वासना है।

कमजोर हूं,
तेरी किरणें तपा न दें,
जल न जाऊं,
मर न जाऊं,
अपने ज्ञान से पीड़ित हूं,
जड़ में वासना है।

कसूर तेरा नहीं,
मेरा है,
जन्मों की यह,
पीड़ा है;
जड़ में वासना है।

निरुपाय हूं,
कब तक भागूंगा ?
क्षण रुकते, तू छू देगा,
होगा वही, तू चाहेगा,
हे महासूर्य,
मेरा बस नहीं,
जड़ में वासना है।

□ साधु अद्वैत भारती, जबलपुर

धर्म और दर्शन के मसीहा श्री रजनीश और भविष्य का धर्म

□ अवधेश श्रीवास्तव 'मित्र'
घंसोर, सिवनी (म.प्र.)

"धर्म दर्शन" शीर्षक के अंतर्गत 'दिनमान' दिसंबर ६५ के अंक में भगवान श्री के वक्तव्यों को पढ़कर जीवन में सर्वप्रथम ऐसी तीव्रतम अंत: प्रेरणा हुई मानो किसी ने गहरी नींद से झकझोर कर उठा दिया हो और जीवन के चरम-लक्ष्य-पथ पर लाकर खड़ा कर दिया हो मेरे प्रमादी भटके व्यक्तित्व को।

"सच्चा धर्म क्या है ?" यह पूछे जाने पर 'दिनमान' से विशेष भेंट में उन्होंने कहा था—

"वास्तव में धर्म का जन्म अभी हुआ ही नहीं होना है। आज तक के जितने धर्म हैं वे एक प्रकार के प्रयोग हैं जो असफल रहे हैं। अध्यात्म के आधार पर खड़ी संस्कृतियां और व्यवहार पुराने पड़ गए हैं सड़ गल गए हैं। पर उन्होंने मानव जीवन को कोई सही दिशा प्रदान नहीं की। इसी प्रकार भौतिकता पर आधारित संस्कृति और सभ्यता ने भी मानव जीवन को वह नहीं बनाया जो होना चाहिए। अत: भौतिकवाद और अध्यात्मवाद दोनों असफल रहे।

धर्म की परिभाषा को लेकर आज हम जितने विभाजित हैं उतने शायद और किसी प्रश्न पर नहीं हैं। यह विभाजन राष्ट्र को राष्ट्र से, मनुष्य को मनुष्य से अलग कर रहा है। इसका कारण यही है कि धर्म को हमने बाहर खोजा और बाहर ही स्थापित किया है। धर्म बाहर नहीं होता वह अंदर ही होता है। जब भी हम धर्म को बाहर ढूंढ़ने या स्थापित करने की चेष्टा करते हैं तभी वह अधर्म बन जाता है। हमने मन्दिर, मस्जिद, गिरजाघरों और ऐसे ही अन्य स्थान बनाकर धर्म को प्रतिष्ठित करने का प्रयत्न किया, यही लोग धर्म को ढूंढ़ने पहुंचते हैं पर जितना ही हम धर्म को इस मार्ग से पाने का

प्रयत्न करते हैं उतना ही वह हमसे दूर होकर हमें भटकने के लिए छोड़ देता है। परिभाषा को लेकर ही हम इतने बट जाते हैं कि फिर कभी मिल नहीं पाते।"

रहस्यवाद के परम ज्ञाता ने आगे कहा था—"तो फिर हम धर्म को कहां पाएँ ? आत्मा अन्दर बैठी है। वह अद्भुत है। विलक्षण है। उसके प्रति सजग होना और उसे पहचान लेना ही सच्चा धर्म है अपने प्रति सजगता ही सत्य है और वही धर्म है" जब यह प्रश्न किया गया कि–"आपके इस नए दर्शन में आज की त्रस्त मानवता के लिए क्या संदेश है ?"

(भगवान श्री ने जो भी कहा पर मेरी (शास्त्रगत) बुद्धि ने समझा—

यदा यदाहि धर्मस्य
ग्लानि भवति भारत।
अभ्युत्थानम धर्मस्य
तादात्मान् सृजाम्हम।

"आज के युग में मान्यताओं का संकट अपनी चरम सीमा पर पहुंच गया है। हो सकता है इस चरम संकट काल में किसी नई मान्यता का जन्म हो कोई ऐसा सूत्र निकले जो जीवन क्रांति का नया मार्ग दिखा दे"

उन्होंने आगे कहा "पर हम यदि सजग न हुए, भ्रम धारणाओं से मुक्त न हुए तो हमें मार्ग नहीं मिलेगा। आवश्यक यही है कि हम अपने को ही अधिकाधिक सजग बनाने का प्रयत्न करें"

इन समस्त वक्तव्यों को पढ़कर और उनके जीवंत चित्र को देखकर मुझे लगा कि यह व्यक्ति आज समस्त जीवित व्यक्तियों में सर्वश्रेष्ठ है, शायद ऐसे ही व्यक्तियों को युग पुरुष या अवतार पुरुष कहते होंगे। यद्यपि उनका नाम तब "आचार्य श्री रजनीश" ही प्रकाशित था भगवान श्री रजनीश नहीं।

मेरे अंदर एक ऐसी विद्युत सी कौंध गई कि यह व्यक्ति राम, कृष्ण या किसी अवतार से अन्य नहीं और मेरा अब अहंकार देखिए कि मैं अपने को उन लोगों से श्रेष्ठ समझता रहा जिन्होंने मेरे बाद 'आचार्य श्री रजनीश' को "भगवान श्री रजनीश" पुकारा।

मेरे इस अनुभव की दिन पर दिन पुष्टि होती जा रही है। यदि आप विश्व के प्रख्यात भविष्य वक्ताओं के कथन पर विचार कीजिए जिन्होंने भारत वर्ष को निकट भविष्य में विश्व को आध्यात्मिक केन्द्र बन जाने की घोषणा की है।

सोलहवीं शती के जर्मनी के प्रख्यात भविष्य वक्ता श्री नोस्टरड्रम की भविष्यवाणी का भी यही सार

है कि बीसवीं शती के उत्तरार्ध में भारत वर्ष के मध्यवर्ती क्षेत्र में एक ऐसे दिव्य पुरुष का प्रादुर्भाव होगा जो अपने दिव्य भाव से पहले भारत वर्ष फिर शनैः शनैः सारे विश्व पर आधिपत्य करेगा। हर धर्म के लोग उसकी बातें मानेंगे। उसके सिर पर हल्का चांद होगा, धवल वस्त्र धारण करेगा आदि आदि।

सऊदी अरब के राज ज्योतिषी प्रोफेसर हेरार भी ऐसे ही दिव्य पुरुष के विषय में भारत के मध्य में होने की भविष्यवाणी करते हैं।

पर कुछ लोगों को इन भविष्य वक्ताओं की बातों पर अधिक विश्वास नहीं होता। पर इस संदर्भ में हम स्वामी रामतीर्थ के व्याख्यान का वह अंश नहीं नकार सकते जो उन्होंने भविष्य के धर्म के विषय में कहा था—

"भविष्य में ऐसा एक धर्म होगा जो मानव जाति की सेवा करेगा उस पर शासन नहीं करेगा इस एक धर्म की परिभाषा में राम कहता है- हां मानव जाति की सेवा के लिए एक धर्म होगा और वह कौन सा धर्म होगा इसके पहले कि यह बताया जाय कि धर्म क्या होगा ? राम कहता है कि उस धर्म का कोई नाम न होगा भविष्य के धर्म के संबंध में एक और शब्द है भविष्य में ऐसा धर्म होगा जो प्रत्येक व्यक्ति के लिए होगा जिसका विज्ञान और साहित्य सर्वत्र व्याप्त हो जाएगा और यह सार्वभौम धर्म सारे संसार में व्याप्त हो जाएगा लेकिन मनुष्य को किसी भी और सभी नामों से ऊपर उठना होगा।"

(विश्वधर्म से संकलित)

यदि आप धर्म से किसी संप्रदाय का स्वीकृत मत समझते हों ऐसा कुछ समझते हों जो कि पंजीकृत हो या निश्चल हो तो जाग्रत हो जाइये इस तात्पर्य वाले धर्म का अस्तित्व सुदूर भविष्य में नहीं रहेगा।"

("विश्व धर्म" से संकलित)

इसी संदर्भ में यह स्मरण भी अनिवार्य है कि "भगवान श्री रजनीश" ने कहा है कि—

भविष्य में मेरे नाम का दूसरा हिस्सा (रजनीश) भी गिर जाएगा।

स्मामी रामतीर्थ के उपयुक्त व्याख्यान का संकेत जिस ओर है वहां हम ऐसे ही अनाम धर्म और भगवानश्री को अपने बीच पाकर गौरवान्वित हैं।

किसी सत्यसंधित्सु साधक को धर्म का प्रतीक खोजने के लिए और कहीं जाने की अब क्या आवश्यकता है ? आवश्यकता है अपने ही बीच देख सकने वाली जिज्ञासु आंखों की।

आइये इस धर्म क्रांति की पावन बेला में जिसके हम सौभाग्य से साक्षी हैं...उसमें सहयोग के पात्र ("निमित्त मात्र") बन जायें।

क्रांति-ज्योति

★

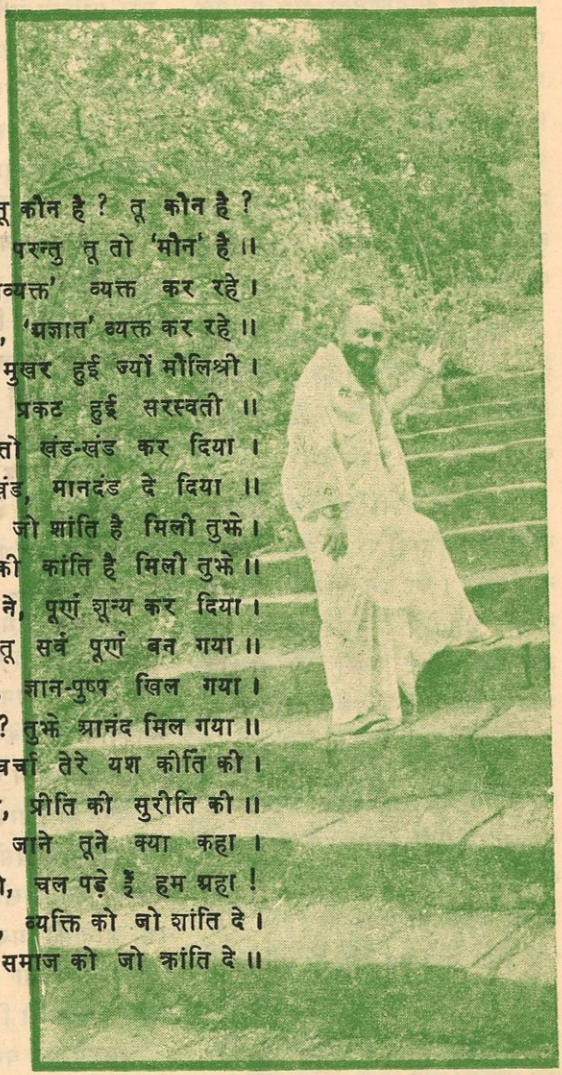

अवाक् मन ये पूछता, तू कौन है ? तू कौन है ?
चित्र तो मुखर हुआ, परन्तु तू तो 'मौन' है ।।
कर युगल उठे हुए, 'अव्यक्त' व्यक्त कर रहे ।
'अज्ञात' प्राप्त कर रहे, 'अज्ञात' व्यक्त कर रहे ।।
अधर-प्रसून जब हिले, मुखर हुई ज्यों मौलिश्री ।
हाथ में कृपाण ले, प्रकट हुई सरस्वती ।।
अधर्म रूढ़िवाद को तो खंड-खंड कर दिया ।
मनुष्य को नया अखंड, मानदंड दे दिया ।।
मुदित नयन बता रहे, जो शांति है मिली तुझे ।
दिव्यता व पूर्णता, की कांति है मिली तुझे ।।
'ध्यान' और समाधि ने, पूर्ण शून्य कर दिया ।
धर्म, कर्म, बोध से, तू सर्व पूर्ण बन गया ।।
काम राम बन गया, ज्ञान-पुष्प खिल गया ।
भव्य दिव्य कौन सा ? तुझे आनंद मिल गया ।।
ठौर-ठौर चल पड़ी, चर्चा तेरे यश कीर्ति की ।
'ध्यान की अरीति' की, प्रीति की सुरीति की ।।
'मौन वक्तव्य' में न जाने तूने क्या कहा ।
ज्ञात तब 'अज्ञात' को, चल पड़े हैं हम अहा !
'नव सन्यास' वर दिया, व्यक्ति को जो शांति दे ।
नव-चेतना रहा जगा, समाज को जो क्रांति दे ।।

□ *अवधेश श्रीवास्तव "मित्र"*
घंसोर सिवनी (म.प्र.)

भगवान श्री रजनीश

+

और

+

जे० कृष्णमूर्ति

□ डा० महेश सिंह कुशवाहा
एम. ए., पी–एच. डी.
लखनऊ विश्वविद्यालय

अभी कुछ दिन पहले एक सज्जन से मुलाकात हुई। वयोवृद्ध हैं। कई संत-महात्माओं को देखा-सुना है। जे. कृष्ण मूर्ति को भी काफी पढ़ा है। इधर हाल में भगवान श्री को भी दो एक किताबें पढ़ीं, काफी प्रभावित हुए। उनकी अन्य किताबों के बारे में जानना चाहते थे। उसी सिलसिले में मेरे यहां पता लगाकर आये थे। स्वभावतः भगवान श्री के साहित्य के विषय में चर्चा चल पड़ी। उन्होंने भगवान श्री के विचारों की सराहना की, लेकिन साथ ही यह भी कहा कि भगवान श्री के विचार कृष्णमूर्ति से मिलते-जुलते हैं। कई अन्य सज्जनों का भी यही विचार है। एक जमाना था जब कृष्णमूर्ति का पढ़ना बौद्धिक-वर्ग का एक आवश्यक अंग समझा जाता था। उस वर्ग के लोग जब भी भगवान श्री रजनीश को पढ़ते हैं, उन्हें लगता है यही कृष्णमूर्ति भी कहते हैं। यही नहीं, भगवान श्री-प्रेमी डा० रामचन्द्र प्रसाद ने हिन्दी और अंग्रेजी में भगवान श्री के जीवन-दर्शन पर जो दो पुस्तकें लिखीं हैं, उनमें भी भगवान श्री और कृष्णमूर्ति की वैचारिक-समरूपता का विस्तारपूर्वक दिग्दर्शन कराया गया है। अपनी पुस्तक **आचार्य रजनीश—समन्वय, विश्लेषण, संसिद्धि** (द्वि. सं.) के पृष्ठ २४ पर उन्होंने स्पष्ट शब्दों में लिखा है :

"आचार्य रजनीश और कृष्णमूर्ति में जो प्रातिभ 'ऐकमन्य' मिलता है, उससे ऐसा अनुमान होने लगता है कि आत्मतत्व के अन्वेषण में दोनों

साधकों ने एक ही मार्ग का अनुसरण किया है। दोनों की तत्वोन्मुखी विश्व-दृष्टि और चिन्तन में आश्चर्यजनक समानताएं मिलती हैं, पर ऐसा महसूस होता है कि इन रहस्य द्रष्टाओं का मौलिक सारूप्य आत्मदर्शन-प्रसूत है, न कि प्रयत्नजन्य।"

उक्त उद्धरण से स्पष्ट है कि डा. प्रसाद भगवान श्री और कृष्णमूर्ति की चिन्तना में कोई अंतर नहीं देखते, यद्यपि वे यह भी कहते हैं कि दोनों ही मौलिक हैं। लेकिन उनके शब्दों "ऐसा महसूस होता है" से लगता है कि मौलिकता के बारे में पूर्णतया आश्वस्त नहीं हैं। शायद उन्होंने स्वयं अपने को समझाने और भगवान श्री पर कृष्णमूर्ति का प्रभाव देखने आलोचकों का निराकरण करने के लिए ही इस सारूप्य को "आत्मदर्शन-प्रसूत" बताकर एक समाधान ढूंढने का प्रयत्न किया है।

वस्तुतः भगवान श्री का साहित्य पढ़कर कृष्णमूर्ति का स्मरण आ जाना बहुत ही स्वाभाविक है। खासकर जिन्होंने उनका केवल प्रारंभिक साहित्य या मात्र एक-दो पुस्तकें पढ़ी हैं, उन्हें तो दोनों में बहुत ही साम्य दिखाई पड़ेगा। और ऐसा भी नहीं कि भगवान श्री ने कृष्णमूर्ति का साहित्य पढ़ा या देखा नहीं है। उन्होंने स्वयं ही अपने प्रवचनों में अनेकों बार कृष्णमूर्ति का उल्लेख किया है। इतना ही नहीं, भगवानश्री ने स्पष्ट स्वीकार किया है कि कृष्णमूर्ति महर्षि रमण के स्तर के व्यक्तित्व हैं, जहां से मुक्ति की यात्रा प्रारंभ होती है (देखिये **समुंद समाना बूंद में**, पृ.१८८-९५)। अतः यदि साधारण पाठक इस भ्रम में पड़ जाये कि भगवान श्री कृष्णमूर्ति से प्रभावित हैं, तो कुछ आश्चर्य नहीं।

वास्तव में इस भ्रम का मूल कारण भगवान श्री का बहु-आयामी (Multi-Dimensional) व्यक्तित्व है। उनके व्यक्तित्व में कृष्णमूर्ति, रमण और झेन-परम्परा के साथ ही साथ योग, भक्ति तथा तंत्र साधना के भी दर्शन होते हैं। इसीलिए कभी वह कृष्णमूर्ति की भांति, कभी महावीर की भांति और कभी श्रीकृष्ण की भांति बोलते हुए दिखाई पड़ते हैं। परिणामस्वरूप दो प्रकार की दिक्कतें पैदा हो जाती हैं—कुछ लोग तो उन्हें किसी एक विचारधारा या साधना-पद्धति से जोड़ लेते हैं, और लोग उनके परस्पर विरोधी कथनों से परेशान होकर पूछने लगते हैं कि आखिर वह क्या चाहते हैं? इस द्वितीय प्रश्न का उत्तर स्वयं भगवान श्री ने अपनी पुस्तक **मैं कहता आंखन देखी** में दिया है, जो कि सभी रजनीश प्रेमियों को अवश्य पढ़ना चाहिए।

जहां तक पहली दिक्कत का सवाल है, उसके निराकरण के लिए आवश्यक है कि भगवान श्री का सम्पूर्ण साहित्य (जो कि अभी बराबर बढ़ रहा है) ध्यानपूर्वक पढ़ा और समझा जाये। शीघ्रता से कुछ पढ़कर निर्णय लेना या देना ठीक नहीं।

भगवान श्री ने स्वयं ही कई बार अपने और कृष्णमूर्ति के बीच पाये जाने वाले अन्तर की ओर संकेत किया है। यहां मैं गीता, अध्याय ४ के ३९ वें श्लोक पर दिये गये प्रवचन का एक अंश उद्धृत करना चाहूंगा, जिसमें उन्होंने कृष्णमूर्ति के जीवन-दर्शन को कुछ शब्दों में निचोड़ कर रख दिया है :

"कभी-कभी, जैसे कृष्णमूर्ति के मामले में, मंजिल की बात की जाती है और मार्ग की बात छोड़ दी जाती है। तब कृष्णमूर्ति जैसा व्यक्ति भूल जाता है कि सुनने वाले कृष्ण नहीं हैं, अर्जुन हैं। और सुनने वाले कृष्ण कभी भी नहीं होंगे, क्योंकि कृष्ण किसलिए सुनने आयेंगे ?

इसलिए इधर कृष्णमूर्ति को पीछे-पीछे विषाद मालूम होता है, फ्रस्ट्रेशन भी मालूम होता है। भीतरी, आंतरिक नहीं, अपने लिए नहीं, लेकिन चालीस साल से जिनसे बोल रहे हैं, उनके लिए। करुणापूर्ण है विषाद। विषाद मालूम होता है कि चालीस साल से समझा रहा हूं इनको, वही के वही लोग, वही सामने हर बार आकर बैठ जाते हैं। फिर वही सुन लेते हैं, फिर सिर हिलाते हैं, फिर वही सवाल पूछते हैं, फिर वही उत्तर पाते हैं, फिर खाली हाथ लौट जाते हैं, फिर अगले वर्ष खाली हाथ वापस आ जाते हैं—वही के वही लोग। अगर मरघट पर बोलते होते कृष्णमूर्ति तो कोई खास नुकसान न होता। अगर दीवाल से बोलते होते, तो कोई खास नुकसान न होता।

कृष्णमूर्ति के साथ पहली दफा एक दुर्घटना घट गई और वह दुर्घटना यह है कि वे मंजिल की बात कर रहे हैं, मार्ग की नहीं। वे मंजिल की इतनी बात कर रहे हैं, जितनी मार्ग की करनी चाहिये। अगर कभी मार्ग के संबंध में कोई शब्द आ जाता है तो घबराहट से जल्दी वह उसको दूसरी पंक्ति में नष्ट कर देते हैं। क्या, हो क्या गया है ? ऐसा अब तक नहीं नहीं हुआ था पृथ्वी पर, ऐसा अब तक नहीं हुआ था। किसी आदमी को ज्ञान की किरण फूटने के साथ, अन्तिम को, मंजिल को, कहने का ऐसा भाव नहीं हुआ था। कृष्णमूर्ति को हुआ।

होने का कुछ विशेष कारण है।

कृष्णमूर्ति को दूसरे लोगों ने, लीडबीटर ने, ऐनी बेसेन्ट ने साधना करवाई। कृष्णमूर्ति पर साधना जैसे बाहर से आयी। भीतर सत्व था, भीतर पिछले जन्म तक आ गई संभावना थी। भीतर मौजूद था। क्योंकि अकेले बाहर से कुछ करवाया नहीं जा सकता, जब भीतर मौजूद न हो। सूखी लकड़ी थी भीतर, बाहर से पकड़ायी गई आग, पकड़ गई। लेकिन पकड़ायी गई बाहर से। और जब भी कोई चीज बाहर से पकड़ायी जाती है, तब मन उसका विरोध करता है, अच्छी से अच्छी चीज का भी विरोध करता है। कृष्णमूर्ति के मन में विधियों के प्रति, मेथड् के प्रति एक अनिवार्य विरोध पैदा हो गया। वे बाहर से पकड़ाये गये थे उन्हें।

गुरुओं के प्रति एक विरोध पैदा हो गया; क्योंकि गुरु उनको ऊपर से थोपे हुए मिले। चुने हुए नहीं थे, खोजे नहीं थे उन्होंने। अगर कोई आदमी खुद गुरु खोजता है, तो गुरु कभी दुश्मन नहीं मालूम पड़ता है, लेकिन गुरु किसी को खोज ले, तो झंझट है।"

—गीता-दर्शन, अध्याय चौथा
पृ. ४४५-४६

कृष्णमूर्ति के व्यक्तित्व की शायद इतनी सटीक व्याख्या दूसरी जगह उपलब्ध न होगी, किन्तु इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि भगवान श्री और उनमें मौलिक अन्तर हैं। भगवान श्री ने स्वयं साधना की है, अतः उन्हें समस्त साधना-पद्धतियों का ज्ञान है। उनके प्रवचनों में साध्य और साधना दोनों पर जोर है, जबकि कृष्णमूर्ति केवल साध्य की ही बात करते हैं। सत्य तो सनातन है, जो भी वहां तक पहुंचेगा उसे उसी रूप में जानेगा। अन्तर केवल साधना-पद्धति और अभिव्यक्ति में हो सकता है। इसीलिए जब कोई मंजिल की बात करेगा तो वही कहेगा जो कृष्णमूर्ति कहेंगे—मुहम्मद भी वही कहेंगे, महावीर या बुद्ध भी वही कहेंगे। लेकिन उनके मार्ग अलग-अलग होंगे। भगवान श्री भी जब साध्य की बात करेंगे तो लगेगा कृष्णमूर्ति बोल रहे हैं; लेकिन जब साधक के दृष्टिकोण से बोलेंगे तो कृष्णमूर्ति के बहुत विपरीत दिखाई पड़ेंगे। और ध्यान रहे कि भगवान श्री का जोर सदैव साधक पर है, न कि साध्य पर। इसलिए उन्हें समझने में कोई कठिनता नहीं होती। वे साधक के तल से शुरू करके साध्य तक ले जाते हैं, कृष्णमूर्ति साध्य से शुरू करते हैं और साधक को वहीं ले जाना चाहते हैं। इसलिए कृष्णमूर्ति को समझना दुरूह है। डा० रामचन्द्र प्रसाद ने दोनों की

शैलियों का अंतर स्पष्ट करते हुए लिखा है— "आचार्य रजनीश के उद्‌गार अपेक्षाकृत अधिक आध्यात्मिक और काव्यमयी भूमिका पर प्रकट हुए हैं, कृष्णमूर्ति के उद्‌गार अपेक्षाकृत अधिक सतथ्य एवं व्यावहारिक भूमिका पर (वही, पृ. २४) लेकिन मैं इस कथन से सहमत नहीं हूं। मेरे विचार से भगवान श्री की शैली काव्यात्मक होते हुए भी अधिक व्यावहारिक और सतथ्य है। कृष्णमूर्ति की शैली में जिस बौद्धिक जटिलता के दर्शन होते हैं, भगवानश्री में उसका बिल्कुल अभाव है। गहन से गहन विषय भी इतनी सुबोध शैली में समझाया गया है कि मामूली पाठक या श्रोता की समझ में आसानी से बैठ जाता है। कृष्णमूर्ति के विषय में यह बात नहीं कही जा सकती। उन्हें समझने के लिए बौद्धिक-स्तर का ऊंचा होना आवश्यक है।

वस्तुतः भगवान श्री को किसी एक विचारधारा, विचारक या साधना-पद्धति से बांधा नहीं जा सकता है। उन्होंने जो भी सारभूत है, सभी को आत्मसात कर लिया है या ऐसा कहना चाहिये कि समग्र अस्तित्व से वे एक हो गये हैं। इसीलिए वे महावीर के मंच से भी उतनी ही सहजता से बोल सकते हैं जितनी श्रीकृष्ण या लाओत्से के मंच से। लेकिन कृष्णमूर्ति के लिए यह संभव नहीं है। ●

●

अनमोल वचन

○ संकलन : *रामनाथ शर्मा*, सतना

★ कर्मयोग का सार है, कामना शून्य कर्म।
★ ब्रह्म के दर्पण पर तस्वीरों का जमाव ही संसार है।
★ शास्त्र भी अनुभव हैं लेकिन दूसरे का,
शास्त्र भी ज्ञान हैं लेकिन दूसरे का,
ज्ञान भी ज्ञान है लेकिन 'अपना',।
★ फलाकांक्षा, गहरी से गहरी नास्तिकता है।
★ ज्ञान तो एक ही है। और वह है उसे जानना जो सबको जानता है।

प्यास !

★

मेरे प्रिय रजनीश
लोग तेरे लिए न जाने कितना
भला व बुरा कहते हैं—
और—तो—और...
शब्दों में रच जाते हैं
लेकिन प्रभू—मैं तो,
उनमें से एक हूं,
जिसको कि—तेरी महिमा,
तेरी कीर्ति, तेरा यशोगान, तेरी प्रशंसा
करने को शब्द भी नहीं मिल रहे
क्योंकि शब्द तो सीमित हैं
शब्दों में क्या लिखूं...
तेरा तो सब—
इतना असीम है कि,
शब्दों में भी न समा रहा है
प्रभू—तेरी महिमा गाने की,
तेरा यशोगान गाने की—बड़ी प्यासी हूं
और प्यास बढ़ती ही जा रही है
लेकिन मैं भीतर ही अपने में मौन हूं
किसे बताऊं,
किससे बुझाऊं अपनी प्यास !

□ कु० संध्या मेहता, इन्दौर

एक संस्मरण

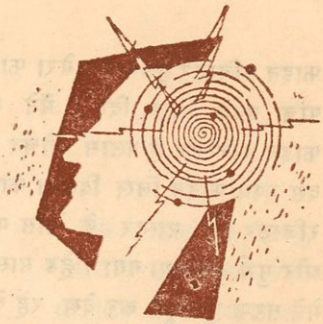

□ साधु अद्वैत भारती
जबलपुर

सितम्बर ७४ में इंग्लैंड के स्वामी प्रभुप्रकाश सपत्नीक मेरे घर महमान हुए। उन्होंने मुझसे कहा कि भगवान श्री के सान्निध्य में घटित कोई मजेदार बात कहें। मैंने कहा—मेरी याददाश्त कमजोर है, फिर भी एक बात थोड़ी सी याद है, वही कहता हूं।

कोई ५ वर्ष हुए जब भगवानश्री का निवास जबलपुर के कमला नेहरू नगर में था। हमेशा की तरह मैं कुछ मित्रों के साथ भगवान श्री से मिलने या सुनने चला जाता था। जिस दिन ज्यादा उदास चित्त होता था, मैं पहुंच जाता था। क्योंकि मैं प्रसन्न हो जाता था और आनंदित घर लौटता था। भगवान श्री हृदय की बात जानते ही हैं। हमें उदास देख कर वे कोई ऐसी बात छेड़ देते थे जिससे हमें खूब हंसी आती थी और हंसी में पेट पकड़ लेते थे। भगवान श्री ने अपने बचपन की मजेदार घटना सुनाई।

भगवान श्री ने कहा—मैं प्राय-मरी स्कूल में पढ़ता था। मेरा क्लास टीचर और हेड मास्टर दोनों बहुत बढ़िया आदमी थे। टीचर महोदय ने आदेश दिया कि सभी विद्यार्थी टोपी पहनकर स्कूल आवेंगे। जो विद्यार्थी टोपी पहनकर नहीं आवेगा, उसका फाइन किया जावेगा। सभी विद्यार्थी टोपी पहनकर स्कूल आ गये, लेकिन मैं टोपी पहनकर न आया। मेरे लिए टोपी पहनना सिरदर्द हो गया, एक बोझ हो गया। मुझसे टोपी पहना न गया। क्लास टीचर ने मुझे अपने पास बुलाया और कहा कि बुद्धिमान बच्चे तो टोपी पहनकर स्कूल आ गये लेकिन तुम? मैंने कहा—बुद्धि का टोपी से क्या संबंध है? यदि आप मुझे यह समझा सकें कि टोपी पहनने से बुद्धि बढ़ती है तो फिर मुझे कोई अड़चन नहीं है। लेकिन क्या टोपी पहनने से बुद्धि बढ़ती है? मेरे उत्तर से क्लास टीचर नाराज हो गये।

फाइन रजिस्टर बुलवाकर मेरा फाइन पांच रुपये लिख दिये। मैंने उस फाइन रजिस्टर में क्लास टीचर का दस रुपये फाइन लिख दिया। फाइन रजिस्टर हेड मास्टर के पास गया और मुझे बुलवाया गया। हेड मास्टर मेरे तरफ घूर-घूर कर देख रहे थे। हेड मास्टर के पूछने पर मैंने अपना उत्तर दोहराया। हेड मास्टर ने अनुशासन की बात कही। मैंने कहा— अकारण ही मुझसे पांच रुपये वसूल किये जायं, तो क्या मैं दस रुपये क्लास टीचर से वसूल नहीं कर सकता? आखिर मैंने फाइन वगैरह नहीं दिया और न वे ले पाये।

उसी प्रकार भगवान श्री ने कई बातें सहज कह डाली हैं जो सुनने में बड़ी प्रिय लगती हैं। उनकी कहने की शैली का हमने जी भर आनंद लिया है। उदास चित्त भी आनंद से भर जाता है। उपरोक्त घटना से मेरे मन में कई विचार आये। मैंने सोचा कि इस तरह तो संत कबीर कहते हैं जिन्होंने कर्म-कांड पर बहुत गहरे प्रहार किये हैं। कबीर साहब कहते हैं—

मूड़ मुड़ाये हरी मिलै,
सबको देय मुड़ाय।
बार-बार के मूड़ते,
भेड़ न बैकुंठ जाय॥

अर्थात् यदि सिर घुटाने से भगवान मिलते हैं तो सभी को घुटा देना चाहिए। सभी भगवान को ऐसे ही उपलब्ध हो जायं। लेकिन भेड़-बकरी के बाल हमेशा मूड़ते रहते हैं, वह तो कभी स्वर्ग नहीं पहुंचती? तो फिर सिर घुटाने का क्या अर्थ है? यदि टोपी पहनने से बुद्धि बढ़ती है, तो फिर सभी को टोपी पहना देना चाहिए। लेकिन टोपी का बुद्धि से क्या संबंध है? हां यह हो सकता है- बुद्धि से टोपी पैदा हुई होगी लेकिन टोपी से बुद्धि कैसे पैदा होगी?

स्वामी प्रभु प्रकाश, उनकी पत्नि मां कृष्ण साधना, साथ में आये इंग्लैंड के ही स्वामी प्रभु प्रेम भारती, आस्ट्रेलिया से आई मां प्रेम दर्शन और आनंद गंगा ने इस वार्ता को सुना और वे खूब हंसे और आनंद में डूब गये।

प्यारा रजनीश

●

वाह रे वाह अलख निरंजन
कहां...है तेरा भगवान
उन्होंने कहा वह...है
तुझमें, मुझमें और सबमें
(१)

देख ! कौन पूछ रहा है
कर ले उसकी याददाश्त
या पकड़ ले उस धारा को
ठीक सदी से यही पूछनेवाले को
(२)

जो बनता 'औ' बिगड़ता
यही सब भ्रम हो जाता
उस भ्रम में ही खो जाता
जो न कभी बिगड़ता 'औ' बनता

जो अपने को समझ नहीं सका
दूसरों में क्या देखेगा तू खाक
जिन्होंने स्वयं को बनाया राख
फिर उसीकी देख सकेगी आंख

देख रे देख निरंजन
उन आंखों को तो देख
जो प्रतिबिम्ब झलकता तेरे में
बोल उसी का तू 'अलख निरंजन'
(५)

जय अलख निरंजन, जय भगवान
जय रजनीश जय जय भगवान
जय, जय, जयजयकार है
वही प्यारा रजनीश है
(६)

□ मा योग सुवर्णा
आरग (महा०)

धर्म : हम और भगवान श्री

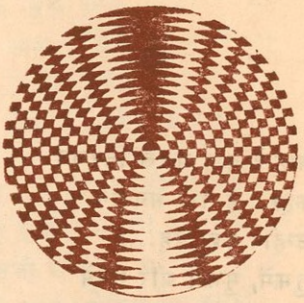

□ स्वामी परमानन्द भारती
३४, आदर्श नगर, अजमेर

एक मित्र हैं मेरे, भगवान श्री को उदयपुर में देखा और सुना है तथा साहित्य में भी रुचि रखते हैं, शिविर में जाने को भी उत्सुक रहे; परन्तु अब पूना में शिविर लगने लगे हैं, तो यह ख्याल भी छोड़ दिया है। पुस्तकें अब भी पढ़ते व खरीदते रहते हैं।

अभी कुछ दिन पूर्व बात चली तो कह रहे थे कि भगवान का काम ढीला पड़ता जा रहा है, जिस गति और जोश के साथ वे धर्म के क्षेत्र में प्रवेश किये थे, वह बात अब नहीं रही और फिर उन्होंने इस बारे में मेरे खयाल पूछे तथा साथ ही अपने विचार भी व्यक्त कर डाले।

उनका कहना था कि भगवान रूढ़िवादिता पर प्रहार करते हुए व सभी विधियों और प्रचलित ढंगों का खण्डन करते हुए, जब क्षितिज पर आये, तो सभी का ध्यान हठात् उनकी ओर आकृष्ट हुआ। लोगों को उनसे बड़ी आशा थी; लेकिन धीरे-धीरे वे नयी लगने वाली बातें पुरानी पड़ने लगीं और उन्होंने भी उन सभी बातों का प्रतिपादन शुरू कर दिया, जिनका उन्होंने खण्डन किया था तथा गेरुए-कपड़े, माला, विधियां एवं गुरु के प्रति समर्पण आदि बातों पर जोर देना शुरू कर दिया।

मुझे उनका यह बौद्धिक-विश्लेषण बड़ा पसंद आया और निश्चित ही परिधि पर घटने वाली घटना कुछ-कुछ ऐसी ही हैं। सदा से ऐसा ही होता आया है कि धार्मिक व्यक्तियों की बातें और उनकी लीला, तो हमें बड़ी प्रीतिकर लगती हैं; क्योंकि वे हमारी पुरानी आदतों के अनुकूल

होती हैं; लेकिन धर्म में प्रवेश याने 'स्व' को विसर्जित करने की बात के साथ ही हमारा संदेह प्रगाढ़ होने लगता है और हम सतर्क हो जाते हैं। स्वयं को बचाने की व्यर्थ चेष्टा हम पर हावी हो जाती है और बात समाप्त हो जाती है।

शब्दों से एक आशा बंधती है और शब्दों को यानी इशारा करने वाली अंगुली को ही, पकड़ने की कोशिश के कारण शब्दों के साथ ही वह आशा, निराशा में बदल जाती है और हम अपनी मूढ़ता को कभी नहीं देख पाते; क्योंकि हमारी नजर दूसरे पर ही होती है और हम उसके लिए कारण खोज लेते हैं, दलीलें देने लग जाते हैं।

सितंबर '७४ के शिविर के दौरान भी केंटोन में बैठे कुछ संन्यासी मित्रों की चर्चा को सुनने का मौका मिला, विषय था कि भगवान ने जून '७४ के शिविर में 'अध्यात्म की कुंजी' पश्चिम को सौंपने की बात कही है, मित्र बहुत दुखी लग रहे थे कि जैसे यह न्यायपूर्ण नहीं लग रही हो बात ऐसा ही रुख था; परन्तु हमारे खयाल में ही यह नहीं आता कि जिसको कुंजी सौंपी जा सकती है, उसकी योग्यता हासिल करने की चेष्टा में लगने की हिम्मत हम अब भी नहीं जुटा पा रहे।

हजारों साल से हमने एक आदत निर्मित की है और धारणा के धर्म को प्रतिष्ठित किया है मन्दिर बनवाये हैं, मूर्तियां खड़ी की हैं, घड़ी-घंटे बजा रहे हैं, प्रार्थनायें कर रहे हैं, प्रवचन सुन रहे हैं, दान दे रहे हैं और कितनी कितनी मूढ़तायें हम कर रहे हैं? कैसे हमने व्यक्ति को धर्म से अलग किया है? निश्चित ही परमात्मा भी कहीं होगा, तो वह हमारी चतुरायी को देखकर स्तंभित रह जाता होगा।

सभी बुद्ध, महावीर, क्राइस्ट इसके आगे मात खाते से प्रतीत होते हैं; क्योंकि हम वैसे ही बने रह जाते हैं, जैसे थे।

रूपांतरण के लिए मिटना जरूरी है और मात्र वही हमें स्वीकार नहीं है और बुद्ध–पुरुष क्या करें? भगवान श्री क्या करें?

आखिरी बात यह शब्दों में ही द्वैत प्रतीत होता है, वैसे हकीकत में धर्म याने भगवान श्री। धर्म कोई अलग बात नहीं है, धर्म तो धार्मिक-व्यक्ति की चर्या का ही दूसरा नाम है। हर धार्मिक-व्यक्ति की और भगवान श्री की भी यही कोशिश है कि हम ऐसी चर्या को उपलब्ध हों और इसके लिए प्रवेश द्वार इस धरती पर बना रहे।

काश ! हम धर्म में रुचि रखते, मिटने को तैयार होते तो फिर भगवान श्री के होने की सार्थकता हमें मालूम पड़ती। विचारों का धुंआ ही धुंआ है और हम अंधे प्रकाश के संबंध में चर्चा कर रहे है, अपनी-अपनी बात कहे जा रहे हैं।

प्रभु हमें प्रकाश की प्यास दे। मिटने की हिम्मत दे; ताकि समझ का जन्म संभव हो। सभी के लिए ऐसी शुभकामना के साथ प्रभु-चरणों में शत-शत प्रणाम।

अनमोल वचन

○ संकलन : रामनाथ शर्मा, सतना

★ संन्यासी वह नहीं है जो घर छोड़कर भाग गया, संन्यासी वह है, जिसके भीतर घर को बनाने वाला बिखर गया है।

★ प्रत्येक की 'निज सम्भावना' ही उसका सत्य है।

★ वासना, भिखारी है और प्रेम सम्राट। प्रेम कहता है कि जो हमारे पास है ले जाओ परन्तु वासना भिक्षावृत्ति है।

★ दया का अर्थ है परिस्थितिजन्य और करुणा का अर्थ है मनःस्थिति जन्य।

★ संन्यास, संसार की जलन और आग का अतिक्रमण है।

★ ईमानदार आदमी जल्दी आस्तिक नहीं हो सकता।

★ जहां अहंकार है, वहां दया झूठी है। जहां अहंकार है वहां कल्याण और मंगल और लोकहित की बातें झूठी हैं। क्योंकि जहां अहंकार है, वहां ये सारी की सारी चीजें सिर्फ अहंकार के आभूषण के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं हैं।

भगवान श्री का चमत्कार और मेरा जीवन

□ साधु राम सरस्वती
(राजकुमार अग्रवाल)
अहमदाबाद

मेरा जीवन आज जिस आनंद–प्रेम और शून्य की विराट नाव में खो गया है, उसके प्रेरणा स्त्रोत तो भगवान श्री रजनीश ही हैं—उनका सहारा न मिला होता तो मेरा और मेरे परिवार का कौनसा ठिकाना होता, कह नहीं सकता।

अचानक मेरे हाथ में जलगांव की लायब्रेरी से 'जिन खोजा तिन पाइयां' किताब पूज्य भगवान श्री की उपलब्ध हो गई जहां मैं एक ट्रांसपोर्ट कम्पनी में कार्य करता था। फिर क्या था मानो मेरे मन की मुराद पूरी हो गई और मेरे जीवन ने जो कुत्संग से कमाग्नि को खोकर दाम्पत्य जीवन को व्यर्थ बना दिया था, उसे पुनः प्राप्त किया और इतना ही नहीं इसके छलावे सुख से मन भर गया और चित्त ने वासना के ऊर्ध्वीकरण का मार्ग पकड़ा। इस तरह मेरा जीवन रूपी कमल अंधकार के कीचड़ से निकलकर सूर्य की प्रकाश किरणों में खिल गया, और मेरा जीवन नित प्रति अज्ञात के नए–नए लोकों में विचरण करता है।

इस आंतरिक आनन्द को पाने हेतु मैंने भगवान श्री के शिविर अटेन्ड किए और मेरी सहधर्मिणी पत्नी ने भी भगवत् आनंद का रस चखा।

अब हम दोनों का जीवन तो आनन्द और प्रकाश से आविर्भूत है ही, मैं और मेरे दोनों पुत्र, तीनों ने अब नौकरी छोड़कर अपना धंधा शुरू किया है और भगवत् कृपा से भौतिक जीवन को परमात्म साधन का एक मार्ग बना लिया है।

शरीर और मन की क्रियायें संतुलित होकर, परमात्म आनन्द से चित्त भर गया है और जीवन नित प्रति, प्रति क्षण शून्य की तरंगों से गतिमान हो रहा है।

मेरी दृष्टि में तो इससे बड़ा चमत्कार तो इस पृथ्वी पर होना मुश्किल है। भगवान श्री के चरण कमलों में बार बार नत मस्तक होने के सिवा हमारे पास और है भी क्या जो दे सकें।

धन्य है प्रभु तेरी लीला-अपार है।

बाहर नहीं भीतर • अन्तस में

□ माधव जैन "अन्तस"
बैतूल (म. प्र.)

एम०ए० हिन्दी का अध्ययन करने के पश्चात् मेरे अन्तस् में उन महान कवियों की रहस्यमयी भावनाओं ने घर कर लिया। ये ही भावनायें एक खोज प्रवृत्ति की ओर मुड़ कर उन्मेष बन गईं तथा में कौन हूं ? आज तक जो दौड़ धूप हो रही क्या यह सत्य की है या मृग तृष्णा रूप ही। मेरी प्रज्ञा इसी में खो गई। इसी अवस्था में भारतीय दर्शन पढ़ डाला किन्तु तीव्रता में उर्ध्वगति के अतिरिक्त कोई क्रांति नहीं हुई— दृष्टि श्री रजनीश— साहित्य पर पड़ी— "मैं कौन हूं", "संभोग से समाधि की ओर", 'अमृत कण', 'सत्य की पहली किरण' "सत्य की खोज" "निर्वाणोपनिषद" तथा "साधना-पथ" पर।

बस मेरा मनन करने वाला मन बर बस इसी में रमण करने लगा। कुछ दिन 'साधना-पथ' का गहन चिन्तन व निश्चयन हुआ, साक्षीभाव घनीभूत होता गया।

निर्जन वनश्री में जाकर बैठ जाता—तब भाव एक रहता—केवल एक–"बस हूं ही"—"बस हूं ही"

३० सितम्बर ७४ को वन्य-सौंदर्य को जाकर निहार रहा था

लेटे–लेटे। "निर्वाण उपनिषद"— (रजनीश) के शरीर तथा आत्मा के पृथकत्व पर चिन्तन हो रहा था कि लगा मेरे चक्षु सजल–सजल हो गए हैं। करूणा तैर गई चित्त पर,–किसी किरण ने मुझे छुआ-उठाया-उठ गया ले गया आगे-चला गया-वनश्री में खड़ा-खड़ा ही रह गया-वह्नि-धारा नयनों के पार हो गयी–मैं-मैं न रहा, "पराया मैं" लय हो गया और रह गया वही जो सदा-सर्वदा से उपस्थित ही है।

घर वापस लौटा-देखता क्या हूं-सारा-सारा वातावरण ही बदल गया है। लोग मुझे सुनते रहे और मैं उनको। लोग मुझे देखते रहे और मैं उनको किन्तु मेरा देखने और सुनने का ढंग अजीब ही रहा और आज भी है।

पहले जो केन्द्र आच्छादित था-स्वच्छ हो गया। अब मैं वही-वही एक किरण, वही एक स्फुरण, वही एक संगीत तथा वही एक दिव्य आलोक को देख रहा हूं या श्री रजनीश भगवान की असीम अमृत वाणी से देखने में समर्थ हूं।

कैसे कहूं? उस असीम को ससीम शब्दों में—

फिर भी–

अन्तस् से उद्‌गार उठे–

बस नाम के बिना हूं,
मेरे बहुत नाम हैं।
"रूको और देखो"
यही आत्म ज्ञान है॥
जब आत्मा दिखी तो
'हूं' यहीं खड़ा:
विचार ही संसार है,
'मैं'ने ही तो गढ़ा,
सूर्य भी 'बस हूं'
मेरे दिन और शाम हैं।
"रुको और देखो"
यही आत्मज्ञान है॥

रजनीश की वाणी है
ऋचा आत्मज्ञान की।
ठहरो, रुको और देख लो–
वेला विहान की॥

भगवान रजनीश को 'अन्तस' का
प्रणाम

गुरु द्वारा दी हुई दीक्षा का महत्व

○ अनु. मोतीशंकर शुक्ल
जबलपुर

सन्दर्भ—विज्ञान भैरव तन्त्र पर १९-११-७२ को बम्बई (भारत) में दिये गये प्रवचन से।

प्रश्नकर्ता—भगवन् आप बहुत सी ध्यान प्रणालियां समझाते रहे हैं। क्या यह सच है कि कोई भी प्रणाली तब तक उतनी सशक्त नहीं हो सकती जब तक कि साधक उसमें दीक्षित न हो जाय ?

भगवान श्री रजनीश—कोई भी प्रणाली गुणात्मक रूप तब निराली हो जाती है जब आप उसमें दीक्षित हो जाते हैं; मैं विभिन्न प्रणालियों के विषय में बताता रहता हूं और आप उनका प्रयोग भी कर सकते हैं; यदि एक बार आप उनकी वैज्ञानिक भित्ति और मार्ग समझ लें। फिर भी दीक्षा किसी भी प्रणाली को एक निराली ही गुणात्मकता प्रदान करती है। यदि मैं किसी विशिष्ट प्रणाली में दीक्षित करता हूं तो वह विशेष प्रकार की होगी क्योंकि उसमें बहुत सी बातें निहित रहेंगी।

जब मैं किसी प्रणाली के विषय में आपसे बात करता हूं तब मैं समझाता हूं जिससे आप उसका अपना उपयोग कर सकें। आपको प्रणाली तो समझा दी जाती है किंतु किस प्रकार से आप पर वैयक्तिक रूप से उपयुक्त है इसकी चर्चा नहीं हो पाती। संभव नहीं रहता। दीक्षा संस्कार में प्रणाली की यन्त्र कला की अपेक्षा आप अधिक महत्वपूर्ण होते हैं। जब गुरु आपको दीक्षित करता है तो आपका पूर्ण अवलोकन करता है। उसे पता हो जाता है कि आपकी कोटि क्या है, पिछली विकास की पृष्ठ भूमि क्या है, कहां पहुंच चुके हैं और वर्तमान केन्द्र बिन्दु कहां है और

तब निर्णय लेते हैं कि कौन सी प्रणाली आपके लिये चयन की जाय। यह एक व्यक्तिगत पहुंच है जिसमें प्रणाली से अधिक आप महत्वपूर्ण होते हैं। आपका अध्ययन, अवलोकन तथा विश्लेषण किया जाता है। आपके पूर्वजन्म, आपकी चेतनता, मनस तथा शरीर की जांच होती है। आपकी गहराई से खोज की जाती है कि आप तत् क्षण कहां पर हैं क्योंकि उसी बिन्दु से यात्रा प्रारम्भ होती है। चाहे जो प्रणाली कारगर नहीं होती।

फिर गुरु आपके योग्य उचित प्रणाली का आविष्कार करता है। यदि आवश्यकता समझता है तो सूक्ष्म परिवर्तन, न्यूनाधिकता करके उसे आपके उपयुक्त कर देता है। और फिर जब वह आपको दीक्षा देता है तब वह प्रणाली आपको सौंप देता है। इसीलिए आग्रह है कि जब आपको किसी प्रणाली में दीक्षित कर दिया तो उस पर तर्क वितर्क की नहीं रहती, उसे गुप्त रखने का विधान है। क्योंकि वह आपकी अपनी वस्तु होती है। यदि आप प्रकट कर देते हैं तो वह सहायक होने के बदले हानिकर हो सकती है।

जब तक कि आपको उपलब्धि नहीं हो जाती, कि अब आप दूसरे को दीक्षा देने के अधिकारी हो गये ऐसी गुरु आज्ञा नहीं होती तब तक आपको गोपनीयता निभानी चाहिये। इस पर दूसरों के साथ, यहां तक कि पति, पत्नी या मित्र के साथ भी, चर्चा नहीं करनी चाहिये। अत्यन्त गोपनीय है क्योंकि खतरनाक है। बहुत शक्तिशाली है और केवल आपके ही लिये आविष्कृत की हुई। यह केवल आपके लिये है दूसरे के लिये नहीं।

वास्तव में प्रत्येक व्यक्ति इतना अद्वितीय होता है कि उसे भिन्न प्रकार की ही प्रणाली चाहिये जो किंचित् परिवर्तन द्वारा की जा सकती है। जिन प्रणालियों की मैं चर्चा करता रहा हूं वे संख्या में ११२ हैं तथा ये उनके सामान्य रूप हैं तथा इन सबका प्रयोग किया जा चुका है, यह सामान्य विमर्श आपको अनुकूल पड़ती है आगे बढ़ सकते हैं लेकिन यह उस प्रणाली की दीक्षा नहीं कहलावेगी। दीक्षा गुरु तथा शिष्य के बीच वैयक्तिक तथा व्यक्तिगत मामला होता है तथा अन्तर्सन्देश हुआ करता है। केवल यही नहीं और भी कई बातें दीक्षा में निहित रहती हैं। गुरु जब किसी प्रणाली को देता है विशेष मुहूर्त का निश्चय करता है जिससे वह आपके मन के अचेतन भाग में बहुत गहरे तक उतर जाय।

जब मै बात करता हूं आपका

सचेतन मन सुन रहा है, आप भूल जायेंगे। यद्यपि मैं ११२ प्रणालियों की बात करता रहा हूं आप उनके फिर से नाम भी नहीं बता सकते। आप में से बहुत से उनको पूरी तरह भूल जायंगे। आप कुछ ही याद रख सकेंगे और फिर उनको भी गड़बड़ कर देंगे, कैसे क्या करना यह न समझ पायेंगे। गुरु को उन क्षणों की खोज करना पड़ती है जब आपका अवचेतन मन उन्मुक्त हो जिससे प्रणाली अवचेतन में गहरे तक प्रवेश कर सके। इसीलिये समर्पण दीक्षा के लिये इतना आवश्यक होता है। जब तक आप समर्पण नहीं कर देते आपका चेतन मन सावधान चौकी देता रहता है। जब आप समर्पित हो जाते हैं आप अपने चेतनमन को निवृत्त कर देते हैं और अवचेतन मन गुरु के सीधे संपर्क में आ जाता है।

उचित घड़ी का चुनाव करना पड़ता है जब आप अपने को दीक्षा के लिये तत्पर करते हैं। आपको तैयार करने में महीनों उचित आहार तथा निद्रा चाहिये सब बातों को निश्चित बिंदु तक पहुंचने पर ही आप दीक्षित किये जा सकते हैं। इसलिये दीक्षा एक लम्बी तथा वैयक्तिक प्रक्रिया है। जब तक कोई पूर्ण समर्पण के लिये तैयार नहीं होता दीक्षा सम्भव नहीं होती।

इसलिये मैं आपको इन प्रणालियों में दीक्षित नहीं कर रहा केवल उनसे परिचित करा रहा हूं। यदि कोई ऐसा प्रतीत करता है कि वह किसी प्रणाली में दीक्षित कर दिया जावे, मैं उसे उस प्रणाली में दीक्षित कर सकता हूं किंतु फिर यह एक लम्बी प्रक्रिया होने वाली है, फिर आपको अपनी वैयक्तिकता पूरी तरह से दूर फेंकना पड़ेगी और पूर्ण रूप से आवरण रहित होना पड़ेगा कुछ भी न बचा रखकर। फिर आसान हो जायगा क्योंकि जब उचित व्यक्ति को उचित समय पर उचित प्रणाली उपलब्ध होती है तो वह विद्युतवत् कार्य करती है। व कभी-कभी ऐसा होता है कि जब गुरु दीक्षा देता होता है शिष्य को बोध हो जाता है। दीक्षा मात्र प्रबुद्धता हो जाती है। प्रणाली जब गुरु द्वारा वैज्ञक्तिक रूप से व्यक्तिगत दी जाती है सजीव हो जाती है।

जो भी मैं अभी कर रहा हूं दीक्षित करना नहीं है यह ध्यान में रखें, यह केवल वैज्ञानिक पहुंच मात्र है जिससे ११२प्रणालियां पुनरुज्जीवित तथा प्रकाश में आ सकें। यदि किसी को अनुराग है तो उसे दीक्षित किया सकता है और यदि आपको वास्तविक लगन है, आप दीक्षा को प्राप्त हो सकते हैं क्योंकि प्रणाली पर अकेले

काम करना बहुत लम्बा मामला है यह कई जन्म का समय या कई-कई वर्ष ले सकता है जिसे आप चला पाने में भी समर्थ न हो सकें।

दीक्षा के माध्यम से यह बहुत सुगम हो जाता है, तब प्रणाली एक अंतरसन्देश हो जाता है। फिर प्रणाली के द्वारा शिक्षक आपके भीतर काम करना प्रारम्भ कर देता है। दीक्षा गुरु के साथ जीवन्त संबंध होता है और बहुत गहरे तक जाता है। वह आपको परिवर्तित तथा नवनिर्मित व्यक्ति बना देता है। ●

अनमोल वचन

○ संकलन : रामनाथ शर्मा, सतना

★ एक 'मैं' न हो तो समर्पण हो सकता है।
★ दो अतियों के बीच में खड़ा होना ही अहंकार से मुक्त होना है।
★ आस्तिक वह है जिसके मन में शिकायत नहीं।
★ अगर ज्ञात है आपको सिर्फ मृत्यु तो अज्ञान आधार है, और अगर ज्ञात है आपको अमृत, जो नहीं मरता तो ज्ञान आधार है।
★ सिर्फ शून्य ही पूर्ण होता है और पूर्ण ही शून्य होता है।
★ जो न पाया जा सकता है, न छोड़ा जा सकता है, उसका नाम संसार है।
★ विनाश का 'रस' हिंसा है।
★ सत्य के सम्बन्ध में जानना, सत्य को जानना नहीं है।
★ आज का सारा धर्म 'जानने' शब्द को छोड़कर 'मानने' शब्द के इर्द-गिर्द घूम रहा है।
★ जब तक किसी आदमी की जिन्दगी में साध्य का ख्याल न उठे, तब तक वह गरीब है।
★ संकल्प के प्रति सिकुड़े होने की हालत में नास्तिकता का गहरा हमला होता है।
★ ज्ञानी जानता है, विद्वान सोचता है।
★ अनित्यता की स्वीकृति समझ है, प्रज्ञा है।
★ गुरु का काम समझाना कम दिखाना ज्यादा है।

जीवन की निस्पृहता में जीना ही जिनका अपना व्यक्तित्व है, भगवत् आज्ञा को जिन्होंने शिरोधार्य किया है चाहे कितना ही खोना पड़ा हो और सब कुछ हंसते हंसते ही खेल में सारा कुछ दे दिया हो, ऐसे अद्भुत समर्पित व्यक्तित्व को पूज्य भगवान श्री के जन्म दिन पर याद करना, भगवान के प्रसाद को चहुं दिशा में फैलाना ही है। और ये समर्पित भावना के अप्रतिम व्यक्ति हैं साधु ईश्वर समर्पण।

भगवान की शरण में समर्पित

एक अनोखा व्यक्तित्व : साधु ईश्वर समर्पण

□ चन्द्रकांत मकीम
बम्बई

कोई पूछ सकता है, पुराने सचिवों में सबसे ज्यादा दिन तक सचिव पद पर बने रहने का सौभाग्य साधु ईश्वर समर्पण को क्यों प्राप्त हुआ ? क्या है राज ? क्या है विशेषता ? उन विशेषताओं की चर्चा मैं यहां करना चाहूंगा।

ईश्वर समर्पण की विशेषता एक ही वाक्य में कहना चाहूं तो इन शब्दों में कह सकता हूं।

अपने काम के प्रति पूर्ण समर्पण और अहम् शून्य व्यक्तित्व। रजनीश जैसे शून्य सम्राट के पास अहम शून्य व्यक्तित्व का होना ही तो सबसे बड़ी योग्यता है। इसीलिए तो खुद की गाड़ी में दूसरे को बिठाकर खड़े खड़े यात्रा करते हुए उनको आबू शिविर में देखना या क्रास मैदान में गीता

प्रवचन में टेबिल पर चढ़ कर गीता दर्शन के पेपर बेचते देखना अपने आप में उनकी महानता का दर्शन है। आन्दोलन की सफलता के लिए सबसे आवश्यक जो दो गुण होने चाहिए वे भी ईश्वर समर्पण के जीवन में आप सहज देख पायेंगे। वे दोनों गुण हैं लोक संपर्क और लोक संग्रह।

लोक संपर्क का मतलब दूसरों से मिलने के लिए सदा तत्पर, चाहे उन्हें आशीर्वाद देना हो या अभिशाप, उन्हें मिलने में कोई औपचारिकता की जरूरत नहीं होती। लोक संपर्क की जब चर्चा कर रहा हूं तब अपने देश की एक बहुत बड़ी संस्था के स्थापक डा० साहब की घटना मुझे स्मरण आ रही है।

एक बार डाक्टर साहब एक गांव में एक मित्र के घर गये थे। वहां उस संस्था की शाखा खोलने के बारे में उस मित्र से कुछ बातें करनी थीं। मित्र के घर बातचीत के आरम्भ में ही चाय के लिए आग्रह किया गया। डाक्टर साहब ने हां भर दी। साथ वाले मित्र चौंक गये। लेकिन उनके व्यक्तित्व की विराटता को देखते हुए उस क्षण तो कुछ नहीं बोले। डाक्टर साहब ने जब मित्रों के साथ विदा ली तो रास्ते में मित्रों में किसी ने पूछ ही लिया डा० साहब आपको साधारणतः चाय लेते तो कभी नहीं देखा! डा० साहब ने कहा, हां, बचपन से व्यायाम आदि का शौक होने से किसी भी प्रकार के व्यसन का मुझे स्पर्श नहीं हुआ लेकिन चाय के बहाने मित्र के यहां दो चार मिनट ज्यादा बैठना तो हुआ ही। चाय तो महज एक बहाना था।

ईश्वर भाई के लिए भी काम तो एक बहाना है काम के द्वारा वे व्यक्ति व्यक्ति में छिपे प्रेम के पुंज को स्पर्श करते हैं जिनकी भगवान श्री अपने प्रवचन में हमेशा चर्चा करते रहे हैं।

दूसरा महत्वपूर्ण गुण है लोक संग्रह। लोक संग्रह का मतलब दूसरे में अपने काम के लायक क्या गुण है सिर्फ यही देखना। कोई भी व्यक्ति ईश्वर भाई के संपर्क में आ जाय और ईश्वर भाई बिना उपयोग किये उन्हें छोड़ दें, मुश्किल है। क्योंकि ईश्वर भाई को मनुष्य से अगाध प्रेम है। इस संदर्भ में एक आंदोलनकर्ता की घटना मुझे याद आती है।

एक बार एक एक संस्था के प्रमुख अपने कुछ मित्रों के साथ एक गांव पहुंचे और अपने मुद्दे की चर्चा उन्होंने गांव के मुखिया से की। बात चीत पूरी होने के बाद ग्रामीण मुखिया

ने सत्कार के लिए चाय की व्यवस्था की। चाय तैयार होने पर अपने पसीने वाली धोती से ही छानकर सब मित्रों को बांट दी। प्रमुख के साथ वाले मित्र यह दृश्य देखकर चाय पीने से कतराने लगे। प्रमुख ने तो चाय पी ली और सस्नेह ग्रामीण लोगों से विदा ली। रास्ते में साथियों ने पूछ ही लिया क्या आपको मालूम नहीं था कि चाय किस ढंग से बनी थी। संस्था के प्रमुख ने कहा लेकिन मैंने उनकी चाय कहां पी ? मैंने तो उसका प्रेम पिया था।

ईश्वर समर्पण के संपर्क में आने वाले भी इसी तरह का 'पोजीटिव आउटलुक" का अनुभव अवश्य करेंगे।

मृत्यु के कुछ साल पहले दगाल ने कहा था "सार्त्र को गिरफ्तार नहीं किया जा सकता, सार्त्र फ्रांस है। फ्रांस में जो स्थान सार्त्र का है वही स्थान रजनीश आंदोलन में ईश्वर समर्पण का है।

बहुत से मित्र पूछते हैं आज भी ईश्वर समर्पण का विकल्प रजनीश आंदोलन में क्यों नहीं मिल रहा है ? भगवान् और ईश्वर समर्पण दोनों एक मामले में समान हैं। व्यवस्था, नियम और हिसाबीपन उनके स्वभाव में ही नहीं है।

जहां तक हिसाबीपन का सवाल है केन्द्र के लोगों की एक मीटिंग में कुछ मित्रों की ओर से जब इस बात की चर्चा की गई तो भगवान श्री ने एक ही वाक्य कहकर सबको चुप कर दिया था। भगवान श्री ने कहा : मैं हिसाबी आदमी को बहुत बुद्धिमान नहीं समझता जहां तक नियम पालन का सवाल है, मुझे जिब्रान की एक कहानी याद आती है :

आंधी और तूफान के बीच एक पादरी मंदिर में बैठा था। उसके सामने एक स्त्री आयी। उसने पादरी के सामने खड़े होकर पूछा : मैं ख्रीस्ती नहीं हूं। नरक की आग से बचने के लिए मुझे कोई नियम बताइये।

पादरी ने स्त्री की तरफ देखा— "नहीं जो विधिपूर्वक ख्रिस्ती हुए हैं उसके लिए ही मुक्ति है'—यह शब्द पूरे हुए भी नहीं कि अचानक एक भयंकर गर्जना हुई। देवल पर बिजली गिरी और आग की ज्वाला फैल गई।

आग बुझाने के लिए नगर जन दौड़कर आये। उस स्त्री को बचाने में सफल हुए परन्तु पादरी को बचाने की कोशिश हो सके उसके पहले वह आग में जलकर राख हो चुका।

ईश्वर समर्पण के व्यक्तित्व का एक और पहलू यहां पर बता देना

जरूरी लगता है, ताकि यह लेख पूरा संतुलित हो सके। वह पहलू हैं हर परिस्थिति में उनका डीफेन्सीव रहना।

ईश्वर समर्पण के लिये डीफेन्सीव रहना शायद उनके जीवन की नियति है क्योंकि बुनियादी तौर पर वह दयालु व्यक्ति हैं। जीवन जागृति आंदोलन के आकाश में प्रमुख व्यक्ति के नाते पिछले १० साल से ईश्वर समर्पण छाये रहे। आंदोलन के नेतृत्व के लिए जरूरी था एक संतुलित व्यक्ति। क्योंकि डिफेंसिव व्यक्तित्व ही पाजिटिव होता है इसलिए कभी भी ईश्वर भाई के मुख से 'नहीं' (नो) सुनने को नहीं मिलेगा। कभी आप किसी काम के लिए पहुंचे और कभी नो कहा तो भी थोड़ा धैर्य रखेंगे तो थोड़े ही समय में आप देखेंगे उनके नो में भी भीतर यश छिपा था। इस बात से आप यह भी ठीक से समझ लें कि आफेन्सिव व्यक्तित्व ठीक इससे उल्टा होता है।

साधु ईश्वर समर्पण में बहुत कुछ है, इसका यह मतलब नहीं कि कुछ भी कमी उनमें नहीं है और हर जीते आदमी में वह स्वभाविक भी है।

एक दिन एक मित्र से अहं शून्यता की चर्चा कर रहा था, तब उसने मुझसे जो कहा वह यहां लिखकर मेरा यह अल्प प्रयास यहां पर ही समाप्त करता हूं।

अहं शून्यता की उनकी विशेषता उनके विनाश का कारण नहीं बनेगी? क्योंकि कभी-कभी व्यक्ति अपने अहम् का संहार करता हुआ, आत्म-संहार में पहुंच जाता है जैसा कि महान चित्रकार वनगाग की स्थिति में हुआ था—(वानगाग ने अपने मित्र गोगां को अपना एक कान काटकर दे दिया था।)

साधु ईश्वर समर्पण के माध्यम से भगवत् जीवन दृष्टि की एक किरण यहां मैंने उपस्थित की है, समग्रता में तो जीवन से ही सारा कुछ उदभूत है, जो कि स्वयं परमात्म तत्व है।

समर्पण की कसौटी पर श्री ईश्वर भाई

पीछे श्री ईश्वर भाई की बेबी सौ० कां० भारती के शादी की चर्चा थी। अपनी ओर से सुश्री भारती ने श्री ईश्वर समर्पण से पूछा—मेरी चैतन्य भारती के साथ जीवन साथी के रूप में रहने की इच्छा है—श्री ईश्वर समर्पण ने बात सुनते ही जा के भगवान श्री को पूछा और देखते-देखते ही शादी की मंगल बेला में सौ० कां० भारती और श्री चैतन्य भारती जी दाम्पत्य सूत्र में बंध गए।

इस घटना के कारण श्री ईश्वर समर्पण के निजी समाज में उग्र प्रतिक्रिया हुई और इसी कारण कई घरों में से भगवान श्री की छवि उतर गई तो कई घरों में उनके साहित्य की होली हो गई, लेकिन श्री ईश्वर समर्पण जो भगवान प्रेमी हैं, उन्होंने भगवान की आज्ञा और व्यक्ति की स्वतंत्रता को परम आदर देकर अविचलित रहे। ●

मनन जीवनोपयोगी (आध्यात्मिक हिन्दी मासिक) **मनन**

वार्षिक मूल्य ६ रु. ☐ द्विवार्षिक मूल्य ११ रु. ☐ त्रिवार्षिक मूल्य १६ रु.

दुरंगे ४८ पृष्ठ

मनन का प्रत्येक अंक :

★ संत विचारकों व विद्वानों की वैज्ञानिक ढंग से लिखी आध्यात्मिक रचनाओं को प्रकाशित करता है। ★ वेदान्त और धर्म की गहन गुत्थियों को सुलझाने की सीधी और साफ विधियों को उजागर करता है। ★ मानव को उसकी दिव्य सत्ता की ओर उन्मुख करने वाला क्रांतिदूत। ★ पारिवारिक तथा खेल-कूद, ज्ञान-विज्ञान का अनूठा समन्वय।

● पांच ग्राहक एक साथ बनाकर भेजने वाले को मनन के १२ अंक मुफ्त।

सम्पर्क करें : तुलसी मानस प्रकाशन,

[गुप्ता मिल्स इस्टेट, रे रोड, बम्बई ४०० ०१० फोन : ३९१८३१

तुलसी मा स प्रकाशन की उपलब्धियां

किशनदास अग्रवाल द्वारा लिखित

संक्षिप्तरूप मे आधुनिक ढंग से आध्यात्मिकता की ओर प्रेरित करने वाली जीवनोपयोगी पुस्तकें

१. संसार का सार (हिन्दी में) ३–००
२. ज्ञान साधना : ३–००
३. विज्ञान से ज्ञान : १–००
४. वेदान्त-नवनीत : ३–००
५. वेदान्त का सरल बोध : २–००
६. आध्यात्मिक पिक्टोरियल (हिन्दी व अंग्रेजी) : ४–००
७. आध्यात्मिक डायरी १९७४ ६–००
८. आध्यात्मिक चित्रावली (हिंदी-इंग्लिश) पाकेट बुक ६–००
९. मुमुक्षु (शिक्षाप्रद उपन्यास) ५–००
१०. मन की शांति (पद्य) : अंग्रेजी 'पीस ऑफ माइंड' का हिन्दी अनुवाद ४–००
११. हमारी परंपरा : २–००
१२. आराम सुख शांति और आनंद : १–००
१३. Ease Peace Happiness and Bliss (English) 0–25
१४. अपनी ओर इशारा : १–००
१५. व्यवहारिक जीवन और परमात्मा : १–००
१६. श्मशान यात्रा : १–००
१७. मेरे १०८ गुरु : ३–००
१८. सजगता : १–००
१९. अविरोध-निरोध और स्वबोध : २–००
२०. वेदान्त का वैज्ञानिक मनन : २–००
२१. चिंता और निश्चिंतता : २–००
२२. मन के पार : विकट प्रश्नों पर आचार्य श्री रजनीश जी के उत्तर : १–००
२३. घर-घर की समस्या : २–००
२४. पीस आफ माइन्ड : (अंग्रेजी में) ५–००
२५. क्वायटर मोमेन्ट्स : (अंग्रेजी में) : २–००
२६. मनन योग्य बातें : १–००
२७. उनके सान्निध्य में : २–००
२८. जाग रे जाग ४–००
२९. जाग्रत-जाग्रत : ०–५०
३०. आधुनिक वेदान्त : २–००
३१. आंखों देखी २–००
३२. बात-बात में बात (आध्यात्मिक उपन्यास) ३–००
३३. अध्यात्म–नवनीत २–००
३४. साधना शिविर ३–००
३५. ज्ञान प्रेम १–००
३६. 'मनन' आध्यात्मिक मासिक वार्षिक शुल्क : ६–००

ग्राहक एवं एजेन्ट्स एवं पुस्तक विक्रेता पत्र-व्यवहार करें

तुलसी – मानस – प्रकाशन

अन्तर्गत विभाग केबल मार्केटिंग कम्पनी

गुप्ता मिल्स स्टेट, रे रोड, बम्बई–१०

● मानसेवी सम्पादक-मण्डल ●
अरविन्दकुमार □ सुश्री डां. उर्मिला □ आलोक पांडे
नवम्बर '७४

★ भगवान रजनीश आश्रम ★

[१७, कोरेगांव पार्क, पूना–१ (महा०) ○ टेलीफोन : २२८४५]

भगवान श्री के अमृत सान्निध्य में

✠ कार्यक्रम ✠

● २१ नवम्बर से १० दिसम्बर ७४ तक, प्रतिदिन सुबह ८.३० बजे से गुरु नानकदेव की मूल-साधना *'जपजी'* पर *इक ओंकार सतनाम* पर हिन्दी में प्रवचन।

प्रवेश : प्रति व्यक्ति ५ रु० दान-पत्र द्वारा।

● ११ दिसंबर ७४ को भगवान श्री रजनीश जन्म-दिवस कार्यक्रम : रात्रि ८ से ९.३० बजे तक—दर्शन, आशीष एवं सत्संग।

'जन्म-दिवस' के पावन अवसर पर पूना आश्रम के तीसरे भाग का उद्घाटन सुबह ९.३० से ९.४५ के मध्य होगा।

□ विस्तृत जानकारी हेतु उपर्युक्त पते पर मा योग लक्ष्मी से सम्पर्क करें।

स्वत्वाधिकारी प्रकाशक : अरविन्दकुमार, ७९०, राइट-टाउन, जबलपुर.
मुद्रण : अशोक प्रिन्टर्स, ७८१, राइट टाउन, जबलपुर. फोन 2957 P.P.